हिन्दी मीडियम के युवाओं के नाम रवीश कुमार का खुला खत...

धार्मिक जुलूस में आपको उलछते-कूदते देख अच्छा लग रहा है। जिस हिन्दीभाषी समाज ने आप हिन्दी मीडियम वालों को किनारे सरका दिया था, उस समाज की मुख्यधारा में आप लौट आए हैं. क्या शानदार वापसी की है।

मेरे प्यारे हिन्दी मीडियम के युवाओं,

उद्धव की सरकार, गई...गई...या बच गई...उद्धव की सरकार, गई...गई...या बच गई...

आक्रोश का अग्निपथ, शांत हो जाओ अग्निवीर, शांत हो जाओ अग्निवीर आक्रोश का अग्निपथ, शांत हो जाओ अग्निवीर, शांत हो जाओ अग्निवीर विरोध में भड़के युवा, बिहार में बीजेपी दफ्तरों पर हमलाविरोध में भड़के युवा, बिहार में बीजेपी दफ्तरों पर हमला धार्मिक जुलूस में आपको उलछते-कूदते देख अच्छा लग रहा है। जिस हिन्दीभाषी समाज ने आप हिन्दी मीडियम वालों को किनारे सरका दिया था, उस समाज की मुख्यधारा में आप लौट आए हैं। क्या शानदार वापसी की ह। एक रंग की पोशाक पहन ली है, हाथों में तलवारें हैं, जुबान पर गालियां हैं। जुलूस का नाम रामनवमी की शोभायात्रा है। अशोभनीय हरकतों को आप लोगों ने आज के दौर में सुशोभित कर दिया। आपकी इस कामयाबी को मैंने कई वीडियो में देखा, तब जाकर सारी शंकाएं दूर हो गईं कि ये वही हैं, हमेशा फेल माने जाने वाले हिन्दी मीडियम के युवा, जिन्हें समाज ने तिरस्कार दिया, आज धर्मरक्षक बनकर लौट आए हैं। इनके समर्थन में पूरा समाज खड़ा है. सरकार भी है।

मैं दावे के साथ नहीं कह सकता कि उन वीडियो में कोई डीपीएस या श्रीराम स्कूल जैसे महंगे पब्लिक स्कूलों के बच्चे भी रहे होंगे, लेकिन देखने से तो यही लगा कि ज़्यादातर वही होंगे, जो गणित और अंग्रेज़ी से परेशान रहते हैं। जिन्हीं हिन्दी भी ठीक से लिखनी नहीं आती, मगर गाली देनी आती है। मैंने कई वीडियो में गालियों के उच्चारण सुने। एकदम ब्रॉडकास्ट क्वालिटी का उच्चारण था और ब्रॉडकास्ट हो भी रहा था। जिस समाज में उदारता कूट-कूटकर भरी होती है, उसमें उच्चारण भी कुट-कुटाकर साफ हो जाता है।

हिन्दी मीडिया के तिरस्कृत छात्रों ने यह उपलब्धि भाषा के आधार पर हासिल नहीं

की है। धर्म के आधार पर की है, मगर धर्म के शास्त्रों और दर्शनों का ज्ञान हासिल कर नहीं की है। दूसरे धर्म की मां-बहनों को गाली देकर हासिल की है। यहां भी आप हिन्दी मीडियम वालों ने कुंजी पढ़कर पास होने की मानसिकता का प्रमाण दे ही दिया। पूरी किताब की जगह गालियों की कुंजी से धर्मरक्षक बन गए। कोई बात नहीं। अभी आपके हाथों में तलवारें हैं, तो चुप रहना बेहतर है, इसलिए मैं आपकी प्रशंसाओं में श्रेष्ठ प्रशंसा भूरि-भूरि प्रशंसा कर रहा हूं।

हिन्दी प्रदेशों की आर्थिकी के कारण आपकी शारीरिक कमज़ोरी इन जुलूसों में भी झलक रही थी। कुपोषण इतनी आसानी से नहीं जाता है, लेकिन समूह में आप जिस तरह से उछल-उछलकर गालियां दे रहे थे, विद्या कसम, पता नहीं चल रहा था कि आपमें किसी प्रकार की शारीरिक कमज़ोरी। आपने हिन्दी प्रदेशों की दीवारों पर लिखी मर्दाना कमज़ोरी की दवाओं के विज्ञापनों को भी परास्त कर दिया है, जिनमें हिन्दी में वीर्यहीनता को कोसा जाता है.। जब आप तलवार उठाए दूसरे धर्म के लोगों को गालियां दे रहे थे, तभी मैंने विश्वगुरु भारत के क्षितिज पर एक नई वीरता के उदय की उषाकिरणों का साक्षात दर्शन कर लिया। प्रणाम वीरवर।

हमने हिन्दी साहित्य की किताब में राधा-कृष्ण की एक कहानी पढ़ी थी। भामिनी भूषण भट्टाचार्य शारीरिक कमज़ोरी के शिकार थे। जीवन में बहुत कुछ बनना चाहा, वकील भी बने, वकालत नहीं चली, तो व्यायाम करने लगे. एक दिन उनके मित्र ने देखा कि कमरे के भीतर व्यायाम कर रहे हैं। उठा-पठक चल रही है। पूछने पर भामिनी भूषण भट्टाचार्य ने कहा कि मुझे कोई भला क्या पटकेगा, बल्कि मैं ही अभी पचास काल्पनिक पहलवानों को कुश्ती में पछाड़कर आया हूं। मेरे प्यारे हिन्दी मीडियम वालों, तलवार लिए आपको देखा तो राधाकृष्ण की कहानी की ये पंक्तियां बरबस याद हो गईं। इसमें भट्टाचार्य जी ताकत के जोश में बताने लगते हैं कि जल्दी ही मोटरें रोकने लगेंगे। लेकिन जब उनके मित्र ने ग़ौर से देखा, तो शरीर में कोई तब्दीली नहीं आई थी। बिल्कुल वही के वही थे. लेकिन भट्टाचार्य मानने को तैयार नहीं थे कि व्यायाम के बाद भी वह दुबले ही हैं। लगे चारों तरफ से शरीर को दिखाने कि कैसे तगड़े हो गए हैं। अंत में मित्र ने कह दिया कि तुम गामा पहलवान से भी आगे निकल जाओगे। तब भामिनी भूषण भट्टाचार्य की एक पंक्ति है। अभी गामा की क्या बात, थोड़े दिन में देखना, मैं बंगाल के सुप्रसिद्ध पहलवान गोबर से भी हेल्थ में आगे बढ़ जाऊंगा।

इस पर लेखक लिखते हैं कि विचित्र विश्वास था। वह उल्टा मित्र को ही गरियाने लगे कि तुम्हारी तरह किरानी बनकर झक नहीं मारना है। मैं बड़ा आदमी होना चाहता हूं। आज मेरा नाम है भीम भंटा राव कुलकर्णी, व्यायाम विशारद, मुगदराविभूषि, डंबलद्वयी, त्रिदंडकारक। इस विस्तृत परिचय पत्र में मैं अपनी तरफ से तलवारधारी, डीजे नर्तक, गालीवाचक जोड़ देता हूं, ताकि हिन्दी माध्यम के युवाओं का सीना एक इंच और फूल जाए।

जैसा कि हर कामयाबी में होता है, आपकी इस नवीन कामयाबी में भी एक कमी रह गई। समाज के सारे युवा आपके साथ नहीं आए, जबकि धर्म की रक्षा और बदला लेने का काम उनका भी था। खासकर मिडिल क्लास के मां-बाप ने अपने बच्चों को इंग्लिश मीडियम में डालकर उन्हें धर्मविमुख कर दिया है। ऐसा नहीं है कि वे पूजा-अर्चना नहीं करते हैं, खूब करते हैं, मगर तलवार लेकर दूसरे धर्म की मां-बहनों को गालियां देने सड़कों पर नहीं उतरते। अपने बीच मौजूद ऐसे स्वार्थी तत्वों की पहचान कर लीजिए। धर्म की लड़ाई में असली ट्रॉफी यही लोग ले जाते हैं, जब सड़क पर उतरने की जगह सोशल मीडिया पर लिखकर पॉपुलर हो जाते हैं और इंजीनियर तो हो ही जाते हैं। कुछ डॉक्टर भी होते हैं और कुछ अफसर भी। आप देखिएगा, जल्दी ही ये सारे इंग्लिश मीडियम वाले अपने मोहल्ले से गायब होने लगेंगे। फेसबुक पर पूजा के पंडाल को मिस करेंगे, लेकिन पंडाल लगाने की जिम्मेदारी आपके महान कंधों पर छोड़ जाएंगे।

जब अमेरिका, लंदन से लौटेंगे, तो मोहल्ले में सस्ती परफ़्यूम से लेकर घड़ी बांटकर पॉपुलर हो जाएंगे। अपनी कहानी सुनाएंगे और लोग चाव से सुनेंगे। कब तक आप उन्हें दोस्ती के नाम पर स्टेशन से घर लाने का काम करेंगे। यह काम आपने अच्छा चुना है। अब मैसेज कर दीजिएगा कि आप धर्म की रक्षा में एक शोभायात्रा में निकले हैं। तलवारें लेकर दूसरे धर्म की मां-बहनों को गालियां दे रहे हैं। आप ही धर्म की रक्षा के अवैतनिक प्रभारी हैं। स्कूल के दिनों में संस्कृत की कक्षा में मुश्किल मंत्रों और श्लोकों के कारण आप धर्मविमुख हो गए थे, लेकिन मंत्रों की जगह गालियों के इस्तेमाल ने आपको फिर से धर्मोन्मुख कर दिया है।

अब रक्षा का भार आप पर है। आप नहीं होंगे, तो धर्म नहीं बचेगा। तलवारें नहीं बचेंगी। गालियां नहीं बचेंगी। आपने बहुत सह लिया। गणित और अंग्रेज़ी की कमज़ोरी का हिसाब अब धर्म की रक्षा के काम से निकालना है। आपका टाइम आ गया है। आप की शोभा बढ़ रही है। आपके चलते हिन्दी मीडियम वालों की पूछ बढ़ रही है। इंग्लिश मीडियम में पढ़ने वाले हिन्दी समाज के लड़के बाद में पछताएंगे कि जब धर्म की रक्षा में गालियां देने का वक्त था, तो वे कोचिंग कर रहे थे। धर्म को अगर ख़तरा है, तो इन प्राइवेट स्कूलों में पढ़ने वाले युवाओं से है, जो व्हॉट्सऐप में नफरती मीम तो फॉरवर्ड करते हैं, लेकिन कभी सड़क पर उतरकर गालियां नहीं देते। इंग्लिश मीडियम वाले मोर्चे और मुल्क से भागे हुए लोग हैं। निर्लज्ज इंग्लिश मीडियम वाले।

आपका वही, जिसे आप हमेशा से पराया मानते रहे हैं, रवीश कुमार

ये हैं कुछ वजहें जिनसे सुप्रीम कोर्ट के जज अपनी जिम्मेदारियों से नहीं बच सकते

आकार पटेल

अभी हाल ही में हमारे सुप्रीम कोर्ट के एक जज ने विदेश में दिए लेक्चर के दौरान एक बेहद महत्वपूर्ण और चौंकाने वाले मुद्दे को उठाया। लीगल मामलों की एक वेबसाइट ने उनके भाषण की खबर लगाते हुए हेडलाइन में लिखा, "अगर नागरिकों के अधिकारों की रक्षा के लिए अदालतों को एकमात्र जगह माना जाता है, तो इसके नतीजे फिसलन भरे होंगे।" जज (उनका नाम मैं नहीं दे रहा हूं क्योंकि इस मामले में यह बात कहने वाले की नहीं बल्कि बात की अहमियत है और हमें इसे समझना चाहिए) के बयान को लिखते हुए कहा गया कि, "देश में बढ़ती मुकदमेबाजी की प्रवृत्ति राजनीतिक विमर्श में धैर्य की कमी का संकेत है। यह नतीजा एक फिसलन भरी ढलान है, क्योंकि अधिकारों को नगारिकों को दिलाने के लिए अदालतों को ही व्यवस्था या सरकार का एकमात्र अंग माना जाता है, जिससे विधायिका और कार्यपालिका के साथ निरंतर आपसी संवाद की जरूरत खत्म होती है।"

इन शब्दों से एकदम स्पष्ट और साफ है कि इनका असली अर्थ क्या है? जज साफ तौर पर कह रहे हैं कि नागरिकों को अपने अधिकारों के लिए सरकार और चुने हुए प्रतिनिधियों के साथ बात करनी चाहिए। इस प्रक्रिया में अदालतें भी अहम हैं, लेकिन नागरिकों के अधिकारों की रक्षा या उन्हें अधिकार दिलाने की एकमात्र जगह नहीं हैं।

दरअसल ज्यादातर लोकतंत्र इसी तरह काम करते हैं, और न्यायिक प्रक्रिया और खासतौर से सुप्रीम कोर्ट नागरिकों के साथ संवाद या संपर्क का सिर्फ एक हिस्सा होते हैं। अमेरिका में सुप्रीम कोर्ट साल में सिर्फ 80 केसों की ही सुनवाई कर उन पर फैसला देता है। लेकिन भारत में 70,000 मामले सुप्रीम कोर्ट में लंबित हैं। दोनों देशों की न्यायिक प्रक्रिया में इतना बड़ा अंतर स्पष्ट है जबकि हमारा जस्टिस सिस्टम मोटे तौर पर अमेरिकी सिस्टम की ही तरह काम करता है।

1949 में फैसला लिया गया था कि भारत के सुप्रीम कोर्ट में 8 से ज्यादा जज नहीं होंगे। (आर्टिकल 124)। अमेरिका में 9 होते हैं। भारत में आज 30 से ज्यादा सुप्रीम कोर्ट जज हैं। अमेरिकी सुप्रीम कोर्ट सारे मामलों की सुनवाई एक साथ यानी सभी जजों के साथ करता है। भारत में छोटी-छोटी बेंच हैं जो जमानत से लेकर संपत्ति विवाद तक के मामलों की सुनवाई करती हैं। अमेरिका में ऐसे मामले निचली अदालतों में ही निपटा दिए जाते हैं। भारत में ऐसा क्यों नहीं होता इसके कारण जाहिर हैं, इसलिए पूरे जस्टिस सिस्टम को नए सिरे से व्यवस्थित करने की जरूरत है।

चलिए इस बात को छोड़ते हैं, और जज ने जो कुछ कहा उस पर विचार करते हैं। देश के ज्यूडिशियल सिस्टम के नागिरकों के साथ गहरे जुड़ाव और संवाद के बावजूद आंकड़े बताते हैं और जज भी महसूस करते हैं कि देश में मुकदमेबाजी की प्रवृत्ति बढ़ रही है और राजनीतिक प्रक्रिया का नागरिकों के साथ जुड़ाव नाकाफी है। मेरी समझ से यह सही विश्लेषण है। लेकिन सवाल है कि आखिर ऐसा हो क्यों रहा है?

इसका जवाब इस बात में है कि देश की सरकार इस समय मनमानी पर उतारू है। अगर सरकार और इसे नियंत्रित करने वाला राजनीतिक दल बिना किसी मुकदमे या कोई आरोप सिद्ध हुए ही लोगों के घरों को नष्ट करना चाहता है, तो लोग कहाँ जाते हैं? एक जगह वे जा सकते हैं, क्योंकि सरकार तो खुद ही इस मामले में शामिल प्रतीत होती है। और हिंसा के लिए जिम्मेदार लगती है। वे विधायिका के पास जा सकते हैं, यानी विपक्षी दलों के पास जा सकते हैं और सरकार को इस सबका कारण बताने को बाध्य कर सकते हैं। लेकिन क्या भारत में ऐसा हो रहा है? और ऐसा भी नहीं कहा जा सकता है कि नागरिक, सिविल सोसायटी समूह, एक्टिविस्ट आदि जो अदालत की शरण में जा रहे हैं उन्होंने सरकार से संवाद नहीं किया। ऐसा तो उन्होंने किया, लेकिन सत्ता में बैठे राजनीतिक दल की मंशा ही अगर प्रताड़ना हो तो क्या किया जा सकता है। ऐसे में प्रताड़ित करने वाले के साथ किस किस्म का संवाद स्थापित किया जा सकता है?

इस बारे में जज ने कुछ नहीं कहा। भाषण में कुछ और कहा गया, जोकि अधिकारों में बढ़ती खाई को न्यायसंगत ठहरता है। जज ने कहा, "सुप्रीम कोर्ट को नागरिकों के बुनियादी अधिकारों की रक्षा करनी चाहिए लेकिन कोर्ट को ऐसे मुद्दों से दूर रहना चाहिए जिसमें चुने हुए प्रतिनिधियों की भूमिका हो। ऐसा करने से कोर्ट की संवैधानिक भूमिका कम होती है और लोकतांत्रिक समाज की कोई सेवा नहीं होती, यही असली मुद्दा है और इसीलिए ऐसे मुद्दों को जन संवाद, विमर्थ और नागरिकों के उनके प्रतिनिधियों के साथ जुड़ाव और संविधान के दायरे में होना चाहिए।"

जो कुछ कहा गया उसमें कोई असाधारण बात नहीं है। किसी भी स्वस्थ लोकतंत्र में नागरिकों को सरकार के सभी अंगों के साथ अर्थपूर्ण संवाद और जुड़ाव का मौका मिलना चाहिए ताकि उससे नतीजे निकल सकें। हालाँकि, यहाँ इस बात पर जोर दिया जाना चाहिए कि न्यायपालिका का एक बुनियादी काम है कार्यपालिका यानी सरकार की मनमानी रोकना, खासतौर से तब जब इस तरह की मनमानी से भारत के संविधान को खतरा हो। आज स्थिति यह है कि नागरिकों और चुनावी राजनीति में गुप्त चंदे के मामले कोर्ट तय नहीं करता है। कश्मीर पर भी याचिकाओं पर फैसला नहीं हुआ। दबाव का यही वह स्त्रोत है जिसके चलते टिप्पणीकार और एक्टिविस्ट न्यायपालिका का रुख करते हैं और शायद जज का इशारा इसी की तरफ था। हम में से कई को लगता है कि भारत ने एक ऐसे राजनीतिक दल के एक निर्विवाद नेता की अगुवाई में सरकार को नियंत्रण देने का रास्ता पकड़ लिया है। लेकिन यह रास्ता न तो संविधान के अनुरूप है और न ही देश की परंपराओं और आधुनिकता के मुताबिक।

बेशक विधायिका और कार्यपालिका सहित सरकार के सभी तंत्र ऐसे होने चाहिए जहां नागरिक अपने अधिकारों के लिए संपर्क कर सकें। लेकिन यह निर्विवाद प्रतीत होता है कि इस लड़ाई का प्राथमिक क्षेत्र न्याय प्रणाली में होना चाहिए जहां न्यायाधीशों को बड़े पैमाने पर और दुर्भावनापूर्ण सरकार के खिलाफ नागरिकों के लिए खड़ा होना चाहिए।